सहमति और निगरानी के पारः मीडिया के नियमन के लिए मॉडुलर और ज़मीनी दृष्टिकोण

Beyond Acquiescence and Surveillance: A Modular and Grounded Approach to Media Regulation

सहाना उडुपा
Sahana Udupa
August 29, 2011

लगातार जटिल और भ्रामक होते मीडिया परिदृश्य ने भारत में मीडिया नीति के उलझे ईको-सिस्टम के सामने नयी चुनौतियाँ खड़ी कर दी हैं. संचार की उन्नत प्रौद्योगिकी ने मूल रूप से उन तौर-तरीकों को बदल कर रख दिया है जिनके माध्यम से सूचनाओं और अर्थों को सम्प्रेषित, संगठित और प्राप्त किया जाता है. इस नयी प्रगति ने आज भी उतने ही लोकप्रिय परंपरागत मी़डिया के साथ-साथ मीडिया संबंधी वर्तमान नीतिगत दृष्टि पर भी प्रगति के तामझाम को लेकर सवाल खड़े कर दिये हैं. हाल ही के दशकों में लाये गये अनेक विधेयकों से विभाजित ढाँचे को आकार देने में कॉर्पोरेट हितों के प्रति भारत सरकार की ढुलमुल समझौतापरक नीति की ही प्रमुख भूमिका रही है. साथ ही साम्राज्यवादी ढाँचे पर आधारित शासन का उद्देश्य भी या तो मीडिया पर "लगाम कसना है" या फिर कुछ खास तत्वों पर निगरानी रखने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करना है. विनियामक प्राधिकरण इस समय अनेक सरकारी विभागों में बँटा हुआ है और संचार संयोजन विधेयक (2001) और प्रसारण सेवा विनियम विधेयक (2007) व्यापक और तर्कसंगत नीतिगत ढाँचे को लागू करने के घोषित उद्देश्यों को पूरा करने में अभी सफल नहीं हुए हैं. इसलिए मीडिया संबंधी नीति पर चर्चा करने के लिए यह सबसे अधिक महत्वपूर्ण क्षणों में से एक है.क्रिश्चियन सैंडविग ने इंटरनेट आर्किटैक्चर के बारे में सही कहा है, "आज की उन्नत संचार प्रणाली का उलझा हुआ ढाँचा हम पर बोझ नहीं है. यह हमारे लिए कार्रवाई करने का उपयुक्त अवसर है."

सबसे पहले तो नीति निर्माण की शक्ति इस बात में होनी चाहिए कि नवीनतम परिवर्तनों, जिनके कारण कार्यात्मक रूप में संचार क्षेत्र एक ऐसे खुले और मॉडुलर रूप में आ गया है, जहाँ संचार संबंधी कार्य परस्पर ऑपरेटर करने योग्य मानकों के ज़रिये विभिन्न प्लेटफ़ॉर्मों में बिखर गये हैं, को समझकर ही उन्हें पूरी तरह लागू किया जाए. इसके विपरीत, विषय वस्तु, सेवाएँ और पारेषण एक आर्किटेक्चर में बँधकर इकहरे ढाँचे में सिमट गये हैं. मीडिया संबंधी नीतिकार मीडिया के विनियमन के लिए विभिन्न "स्तरित दृष्टिकोण" की वकालत कर रहे हैं ताकि संचार क्षेत्र में आए परिवर्तनों से लाभ उठाया जा सके और तत्संबंधी समस्याओं का समाधान खोया जा सके. भिन्न स्तरित दृष्टि के कारण इस बात को मान्यता मिल गयी है कि विशेष कानून द्वारा विशेष संचार प्रौद्योगिकी के विनियमन के ऊर्ध्वाधर अभिमुखीकरण के परिणामस्वरूप बहुविध इकाइयों और प्रौद्योगिकियों के माध्यम से वितरित संचार के विभिन्न कार्यमूलक उपादानों के समाधान के लिए क्षैतिज अभिमुखीकरण का अवसर मिलना

चाहिए. इसका अर्थ यह है कि चूँकि इकहरी इकाई से दो स्तरों की ज़रूरतें एक साथ पूरी नहीं की जा सकतीं, इसलिए स्वामित्व नियंत्रण और विनियामक मामलों की जाँच संचार के प्रत्येक कार्यमूलक स्तर पर होनी चाहिए. इन स्तरों में सर्वाधिक प्रमुख हैं, विषय वस्तु और भौतिक अवसंरचनात्मक स्तर. दूसरी बात यह है कि नीति-निर्माताओं को चाहिए कि वे नियंत्रण, स्वामित्व और मीडिया अभ्यास जिन्हें ज़मीनी स्तर पर परंपरागत रूप में और नये मीडिया को तेज़ी से फैलाया जा रहा है, के जटिल स्तरों को मान्यता प्रदान करें,
इस प्रकार व्यापक नीति संबंधी दृष्टि को मीडिया संगठन के प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों और ज़मीनी सचाई के अनुरूप विकसित करना होगा. इस संगठन में मीडिया के स्वरूप और निहितार्थों के अनुरूप प्रौद्योगिकीय, विधिक और नृवंशविज्ञान संबंधी अंतर्दृष्टि का समन्वय होना चाहिए. इसमें उल्लिखित तीनों मुद्दे ऐसे होने चाहिए कि इनसे नीति संबंधी वाद-विवाद को एक ऐसे परिदृश्य की ओर ले जाया जा सके, जिसमें समाचार मीडिया और सार्वजनिक सेवा प्रसारण को अधिक बल मिले,क्योंकि लोकतांत्रिक राजनीति में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका को नियमानुसार ही रखा जाता है.

भारत में तेज़ी से फैलते समाचार माध्यम के लिए कोई सार्थक नीतिगत प्रयास करने से पहले यह समझना ज़रूरी है कि देश-भर में समाचार निर्माण का ढाँचा और स्वरूप समान नहीं है. यदि कर्नाटक जैसे कुछ राज्यों में टाइम्स ऑफ़ इंडिया जैसे राष्ट्रीय व्यावसायिक समाचार समूहों के प्रभुत्व को पिछले दो दशकों में अपेक्षाकृत कम प्रतियोगिता का सामना करना पड़ा है तो तमिलनाडु जैसे समाचार संबंधी अन्य बाज़ारों का ढाँचा राजनीतिक पक्षपात के कारण अधिक मज़बूत बना हुआ है. इसका कारण यह है कि टी.वी. समाचार चैनलों और स्थानीय केबल नेटवर्क का स्वामित्व प्रमुख राजनीतिक दलों के सीधे नियंत्रण में है. कर्नाटक में मुद्रण उद्योग के समेकन के पक्ष में प्रवृत्ति होने के बावजूद समाचार की परिपाटी के क्षेत्र में नृवंशविज्ञान संबंधी जाँच से यह बात सामने आयी है कि विस्तार का व्यावसायिक तर्क और कई माध्यमों के अभ्युदय का सीधा संघर्ष उन व्यापक सांस्कृतिक तर्क श्रृंखलाओं से होता है जो वैज्ञानिक और क्षेत्रीय पूँजी के व्यापक मैट्रिक्स के अंदर समाहित होते हैं. मैसूर की रियासत में "मुद्रण संप्रदायिकता" के लंबे अलिखित इतिहास में गैर-ब्राह्मण आंदोलन में पत्रकारों की सक्रिय भूमिका के दौर में बीसवीं सदी की शुरूआत में पत्रकारिता के उभरते स्पष्ट स्वरूप पर निर्मित और उससे भिन्न दोनों ही रूपों में पत्रकारों और समाचारपत्रों के मालिकों में संबंधपरक संबंधों,व्यावसायिक संबंधों और व्यावसायिक नेटवर्क के बीच धूमिल सीमाएँ हैं. आम तौर पर बहुविध किस्में जातिगत पहचान में रूपांतरित हो जाती हैं. इसलिए *जातिबल, जाति समीकरण* और *जाति नेटवर्क* पत्रकार समाज के अंतःसंबंधीय पहलू बने रहते हैं और यही पहलू जाति-आधारित निष्ठाओं से बँधे रहते हैं और उन्हें मज़बूत भी करते हैं. भाषागत निष्ठाएँ भी उतनी ही महत्वपूर्ण हैं,जिन्हें सरकार की उदारीकरण से संबंधित चालू परियोजनाओं के संदर्भ में पुनर्परिभाषित और पुनर्निर्मित कर लिया जाता है. अस्थिर और

संकीर्ण होते हुए भी राजनीति के ये प्रभावी रूप इन तर्कों के माध्यम से एक ऐसे माध्यम में सम्मिलित हो जाते हैं,जिन्हें मैं *"भाषा"* माध्यम कहता हूँ और ये माध्यम जनता के साथ तार्किक और गंभीर संवाद करते हैं, लेकिन इनमें जनता के विभिन्न वर्गों से जुड़े होने के कारण लोकतांत्रिक क्षमता भी होती है, क्योंकि वे प्रतिक्रियावादी सांस्कृतिक राजनीति भी बखूबी और समान रूप से करते हैं,लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि कर्नाटक के किसी समाचार क्षेत्र में प्रचलित बहुविध तर्क देश के अन्य समाचार बाज़ारों पर भी उसी रूप में लागू हों. भिन्न-भिन्न देशों और अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्रों के आर-पार तुलना के लिए उत्तरी अमेरिका,योरोप महाद्वीप और भूमध्य देशों में विद्यमान पत्रकारिता के विभिन्न मॉडलों पर डेनियल हैलिनी और पाओलो मंचिनी आदि की महत्वपूर्ण और समृद्ध कृतियाँ सुलभ हैं. भारत में भी इस प्रकार का तुलनात्मक कार्य नीति निर्माताओं के लिए लाभकारी होगा, क्योंकि इससे नियंत्रण, स्वामित्व और मीडिया में प्रचलित परिपाटियों के स्वरूप में भिन्नताओं और समाचार क्षेत्रों के प्रति बहुविध निष्ठाओं का एकबारगी में ही समाधान किया जा सकेगा.

इससे अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि व्यावसायिक क्षेत्र में विजातीय समाचार परिपाटियों की अंतर्निहित उपस्थिति के कारण एक मज़बूत सार्वजनिक सेवा माध्यम के साथ-साथ सरकारी और सामुदायिक हस्तक्षेप के नवोन्मेषकारी रूपों की आवश्यकता भी बढ़ जाती है. महत्वपूर्ण होते हुए भी समन्वित संचार की कल्पना पर आधारित होने के कारण ऊपर से नीचे का विनियमन एक जीवंत,व्यापक और विचारपूर्ण मीडिया ईको-सिस्टम बनाने के लिए काफ़ी नहीं है.

अमरीका में संघीय संचार आयोग (एफ़सीसी) को अपनी सिफ़ारिशें देते हुए ऐलन गोल्डमैन और ऐन चैन ने मीडिया को ठीक मॉडुलर और समन्वित दृष्टि के ज़रिये ही सार्वजनिक सेवा को पुनर्जीवित करने की व्यापक योजना का प्रस्ताव किया था. इन सिफ़ारिशों ने सार्वजनिक माध्यम में हस्तक्षेप करने के लिए नवोन्मेषकारी परिवेश निर्मित करने में नीतिनिर्माताओं की मदद करने के बजाय विनियमन के स्तरित मॉडल को सरकार के नियंत्रण के तर्क से बाहर कर दिया. यद्यपि उनकी कई सिफ़ारिशें त्वरित डिजिटीकरण के अमरीकी अनुभव पर ही आधारित थीं और कुछ और आकांक्षाओं से भी संबंधित थीं, फिर भी विकसित देशों के मानक से भारतीय संदर्भ में भी कुछ पाठ सीखे जा सकते हैं. इंटरनेट के स्तरित और नेटवर्क संबंधी आर्किटेक्चर के आधार पर उन्होंने प्रस्ताव किया है कि सार्वजनिक सेवा माध्यम में संलग्न विभिन्न प्रकार के संचार साधनों को सार्वजनिक सेवा माध्यमों की उपलब्ध और पुनर्जीवित सुविधाओं के माध्यम से जोड़ा, सुधारा और सँवारा जा सकता है. उनका विश्वास है कि सरकार को टेलीविज़न और रेडियो को पूरी तरह सरकारी सहायता पर निर्भर नहीं रहने देना चाहिए. इसके बजाय सार्वजनिक सेवा माध्यम को ऐसे विकेंद्रीकृत तंत्र के माध्यम से व्यापक श्रेणी के विषय वस्तु प्रदाताओं और सूचनाकर्मियों से जुड़ना चाहिए जो चारों स्तरों-भौतिक अवसंरचना, संयोजन (सार्वजनिक सेवा माध्यम), सँवारना (विषयवस्तु और

सार्वजनिक मूल्य की सेवाओं का समर्थन) और निर्माण (ऐसी विषयवस्तु का निर्माण, जिसे बाज़ार नाकाफ़ी और गलत तरीके से प्रस्तुत करता है) के सरोकारों से संबद्ध हों.

प्रसार भारती का वर्तमान ढाँचा भौतिक अवसंरचना के स्तर को मज़बूती से सँभालता है,लेकिन मॉडुलर दृष्टिकोण के अन्य पहलुओं को अभी उत्पादक रूप में नियोजित करना बाकी है.सार्वजनिक माध्यमों के लिए विषयवस्तु और परिपाटियों के निर्माण के लिए कई प्लेटफ़ॉर्म हैं: सामुदायिक रोडियो, गैर-सरकारी संगठन (एनजीओ), नवोन्मेषकारी समाचार पोर्टल, भ्रष्टाचार विरोधी नागरिक समितियों के प्रहरी और उप-क्षेत्रीय स्तरों के विभिन्न गाँवों में फैले हुए कार्यकर्ताओं के समूह. प्रसार भारती को चाहिए कि वह राष्ट्रीय प्रसारण स्टेशनों को क्षेत्रीय स्टेशनों के साथ जोड़ने के हब-स्पोक मॉडल पर निर्भर रहने के बजाय इन नेटवर्कों को सक्रिय रूप में बहुपक्षीय रूप में परस्पर जोड़ने,सँवारने और उन्नत करने का प्रयास करे ताकि इससे गहन स्तर पर विचार धारा में परिवर्तन आ सके और प्रौद्योगिकी-नीत सरकारी शिक्षाशास्त्र के स्थान पर संचार और सामुदायिक निर्माण का नेटवर्क मॉडल आ जाए. इसके फलस्वरूप प्रसार भारती को बदलते सरोकारों की राजनीतिक रस्साकशी का शिकार बनने से बचने के लिए भी ज़बर्दस्त कोशिश करने की ज़रूरत नहीं रह जाएगी. दूरदर्शन, आकाशवाणी, मीडिया अकादमियों और व्यावसायिक मीडिया संघों को सरकारी सहायता (बहुत कम) मिलती है और गैर-मीडिया कार्यकर्ताओं को चाहिए कि वे सार्वजनिक सेवा माध्यम के एक व्यापक नेटवर्क का अंग बन जाएँ, जिनमें गैर-व्यावसायिक विषय-वस्तु की विभिन्न धाराओं को परस्पर जोड़ दिया जाए और अपने प्रभाव, पहुँच और अपील को अधिकाधिक बढ़ाने के लिए उसे सँवारा जाए.

इससे कहीं गहरे में यह संभावना भी जुड़ी हुई है कि इसे मुख्य धारा के मीडिया की विषयवस्तु के साथ सूचना अधिकार अधिनियम के प्रावधानों से जोड़ दिया जाए. विषय वस्तु विनियमन का यह एक खतरनाक पहलू होगा,जिसके लिए उद्योग जबर्दस्त संघर्ष कर रहा है. जहाँ एक ओर कई राष्ट्रीय समाचार चैनलों ने, जिनमें अंग्रेज़ी के चैनल विशेष रूप से शामिल हैं, स्वयं ही आगे बढ़कर सरकारी हस्तक्षेप से बचने के लिए अपने दैनिक समाचारों में "विकास" और "सकारात्मक समाचार" देने की बाध्यता के कारण स्वयं ही आगे बढ़कर ऐसे समाचार देना शुरू कर दिया है, लेकिन क्षेत्रीय और स्थानीय स्तरों पर,जहाँ समाचार चैनलों और समाचार पत्रों का विस्तार बहुत तेज़ी से हो रहा है, बहुत कुछ किये जाने की आवश्यकता है. राजनीतिज्ञों के स्वामित्व में होने के करण या क्षेत्रीय राजनीति में "किंग मेकर" की भूमिका का निर्वाह करने में गर्व का अनुभव करने वाले अनेक चैनलों के कारण सार्वजनिक सूचनाओं के विस्फोट के बावजूद टी.वी. समाचार चैनल पूरी तरह से जनोन्मुखी नहीं हुए हैं. दूसरी तरफ़ जहाँ एक ओर समाचार पत्रों के अनेक पत्रकार सूचना अधिकार नियम के अंतर्गत सूचनाएँ पाने के लिए सक्रिय हैं.लेकिन यह सब कुछ अपने पाठकों को मात्र रिझाने के लिए ही आवश्यक माना जाता है और ये बातें अक्सर संपादकीय नीतियों और समाचार कंपनियों

की विपणन-नीतियों तक ही सीमित रहती हैं.गंभीर नागरिकों या नागरिक समूहों द्वारा विभिन्न विषयों के बारे में जुटायी गयी सूचनाओं को पर्याप्त रूप में प्रसारित नहीं किया जाता, खास तौर पर तब जब इनसे पाठकों की संख्या बढ़ाने में मदद न मिलती हो. ऐसी स्थिति में सूचना अधिकार अधिनियम के अधीन जुटायी गयी सूचना की उपयोगिता नहीं रह जाती और उस पर कार्रवाई करने के लिए तब तक दबाव नहीं पड़ता, जब तक कि उसका व्यापक प्रचार न हो. सरकार को यह विचार करना चाहिए कि वह मुख्य धारा के मीडिया के लिए राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और स्थानीय स्तर पर आवश्यक कर दे कि सूचना अधिकार अधिनियम के अंतर्गत जाहिर की गयी महत्वपूर्ण सरकारी विभागों की परियोजनाओं और निर्णयों से संबद्ध सूचनाएँ अपने दैनिक समाचार कवरेज में शामिल करें.यह इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि मुख्य धारा के मीडिया के पास खोजी रिपोर्टिंग के लिए संसाधनों की कमी रहती है और कारोबारी पत्रकारिता में भी खोजी उपादान की कमी रहने लगी है. आखिरकार अधिकांश सूचनाएँ सतर्क नौकरशाहों,प्रतिद्वंद्वी राजनीतिज्ञों,लोकायुक्तों और नागरिक समाज के कार्यकर्ताओं के दुस्साध्य प्रयासों के कारण ही उजागर हुई हैं. निश्चय ही मीडिया ने इनकी दृश्यता को कई गुना बढ़ा दिया है,लेकिन न तो मुख्य धारा के व्यावसायिक मीडिया संगठनों ने इस बारे में कोई पहल की है और न ही इसे आगे बढ़ाया है.

सहाना उडुपा,बेंगलोर (भारत) में राष्ट्रीय उन्नत अध्ययन संस्थान में डॉक्टरेट की प्रत्याशी हैं. उन्होंने अपनी कृति में बेंगलोर के वैश्विक नगर और उन समाचार संस्कृतियों के बीच के 1970 के बाद उभरे संबंधों की जाँच-पड़ताल की है, जिसमें उनका व्यापक लक्ष्य यही रहा है कि वे समकालीन पत्रकारिता की परिपाटियों और सार्वजनिक संस्थाओं के अंतःसंबंधों के सैद्धांतिक स्वरूप को रेखांकित करें.वे वैश्विक संचार अध्ययन केंद्र,ऐनरबर्ग संचार अध्ययन स्कूल,पेन्सिल्वानिया विश्वविद्यालय में वसंत, 2010 में विज़िटिंग स्कॉलर हैं.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार
<malhotravk@hotmail.com>